भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों में नारी पात्रों की दशा एवं दिशा का अनुशीलन

डॉ कृष्णबीर सिंह

शोधपत्र-हिन्दी

भगवतीचरण वर्मा का हिन्दी साहित्य के इतिहास में एक विशिष्ट स्थान है। यद्यपि प्रारम्भ में वे एक कवि के रूप में साहित्यिक यात्रा पर अग्रसर हुए थे किन्तु जैसाकि उन्होंने स्वयं अपने एक पत्र में स्वीकार किया है-''विश्वम्भनाथ शर्मा 'कोशिक' के सम्पर्क में आने के फलस्वरूप कथा साहित्य के प्रति अभिरूचि जागृत हुई'' उनकी इसी अभिरूचि का परिणाम यह हुआ कि सन् 1922-23 में उनकी कुछ कहानियाँ 'हिन्दी मनोरंजन' नामक पत्रिका में निरन्तर प्रकाशित हुई और भगवतीचरण वर्मा एक कवि से कथाकार बन गये।

मै मानता हूँ कि कवि या कथाकार बनना या एक दूसरे में परिवर्तित होना कोई विशेष घटना नहीं कही जा सकती अपितु वह एक संवेदनशील रचनाकार यदि नहीं है तो निरर्थक है। इसी संवेदनशीलता की परीक्षा में भगवतीचरण वर्मा हमें मैरिट पर दिखाई पड़ते हैं। कारण, उन्होंने यथार्थ से प्रत्यक्ष-परोक्ष साक्षात्कार किया है। संवाद एवं प्रश्नोत्तर के माध्यम से पात्रों की मनोवैज्ञानिक, सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को समझा है एवं उसके मूल में व्याप्त विभिन्न कारणों का विश्लेषण किया है। अत्यन्त क्लिष्ट, परिमार्जित या गूढ़ साहित्यक भाषा में गद्य साहित्य की रचना करना महत्त्वपूर्ण नहीं है अपितु सफल गद्य साहित्य वही है जो सामान्य जन की समस्या का उल्लेख संवेदनशीलता, ईमानदारी, व प्रतिबद्धता के साथ ऐसी भाषा में करे ताकि पाठक की संवदेनाएँ, भावनाएँ उस कृति के कथानक के साथ दूध में पानी की भाँति समाहित हो जायें, यही रचनाकार की सफलता कही जा सकती है। संक्षेप में, भगवतीचरण वर्मा के उपन्यासों की नारी पात्रों का अनुशीलन करने से पूर्व श्री वर्मा के उपन्यासों के विषय में संक्षिप्त परिचय प्रस्तुत किया जाना अपेक्षित एवं प्रासंगिक होगा। भगवती चरण वर्मा का प्रथम उपन्यास 'पतन' सन् 1928 में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास का कथानक अवध के अन्तिम शासक नवाब वाजिद अली के शासन के पतन, तत्कालीन जनसामान्य की जीवन स्थिति को उल्लेखित करता है। यद्यपि कुछेक आलोचक इस उपन्यास को अप्रामाणिक ऐतिहासिक कृति मानते हैं।[1] श्री वर्मा का दूसरा उपन्यास प्रथम उपन्यास के सात वर्ष पश्चात् प्रकाशित हुआ। 'चित्रलेखा' नामक इस उपन्यास ने श्री वर्मा को ऐतिहासिक केन्द्र के मध्य में स्थापित करने का उद्योग किया वहीं अपने व्यक्तव्य के कारण श्री वर्मा ने एक नवीन विवाद को भी जन्म दे दिया था। इस नवीन विवाद का कारण था श्री वर्मा द्वारा 'चित्रलेखा' उपन्यास की भूमिका में अनातोल फ्राँस की चर्चा करना। वे लिखते है- ''मेरी चित्रलेखा और फ्राँस की ताइस में इतना अन्तर है, जितना मुझमें और अनातोल फ्राँस में। चित्रालेखा में मेरा अपना दृष्टिकोण है, मेरी निजी भावना है और मेरा जीवन का संगीत है।''[2]

परिणामतः तत्कालीन समीक्षकों, आलोचकों एवं हिन्दी साहित्य के विद्वतजनों ने श्री वर्मा जी का इन बातों का अन्यथा सन्दर्भ लगाकर उक्त उपन्यास-''चित्रलेखा'' को 'ताइस' का अनुवाद घोषित कर दिया, किन्तु आज यह विवाद समाप्त हो चुका है और 'चित्रलेखा' उपन्यास एक स्वतंत्र व श्रेष्ठ कृति के रूप में मान्यता प्राप्त है।[3] वास्तव में 'चित्रलेखा' उपन्यास बहुआयामी फलक वाली कृति है जिसमें ऐतिहासिकता, चरित्र, रोमानीयत आदि समाहित हैं जिसके कारण यह उपन्यास विभिन्न वर्गों में एक साथ सम्मिलित हो जाता है। डॉ. प्रभाकर माचवे इसे समस्या प्रधान मानते हैं।[4] वहीं डॉ. शंकर देव अवतरे[5], आचार्य रामचन्द्र शुक्ल[6] आदि भी इसे इसी श्रेणी में रखते हैं। वास्तव में यह उपन्यास 'मानव' एवं उसके जीवन में आने वाली प्रत्येक प्रकार की प्रत्यक्ष-परोक्ष समस्याओं का ज्वलन्त दस्तावेज है जिसमें भोगवाद की वकालत अवश्य प्रतीत होती हैं। इसी क्रम में भगवतीचरण वर्मा का अगला उपन्यास सन् 1936 ई. में प्रकाशित होता है। 'तीन वर्ष' नामक इस उपन्यास का कथानक विश्वविद्यालयी वातावरण, भ्रमित होते विद्यार्थी एवं पंगु व

* अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, एस.एस.जी. पारीक स्नातकोत्तर महाविद्यालय, जयपुर

अपूर्ण शिक्षा पद्धति के चारों तरफ अपना ताना-बाना बुनता है।

पाश्चात्य शिक्षा पद्धति के प्रभाव एवं भारतीय नैतिक मूल्यों एव जीवनादर्श के ह्रास की स्थिति से चिन्तित उपन्यासकार ने इस उपन्यास में मध्यम वर्ग के एक ऐसे युवक को केन्द्र बिन्दु में रखा है जो विश्वविद्यालय में उच्च शिक्षा हेतु प्रवेश लेता है किन्तु वह लक्ष्य विहिन हो जाता है।

सन् 1946 में 'टेढे-मेढ़े रास्ते' नामक उपन्यास प्रकाशित होता है। यह उपन्यास तीस के दशक की राजनीतिक गतिविधियों का उल्लेख करता है। कुल मिलाकर यह उपन्यास राजनीति और राजनेताओं की मानसिकता को उद्‌घाटित करने में सक्षम है। सन् 1950 में 'आखरी दाँव' का प्रकाशन होता है। इस उपन्यास का कथानक पूर्व में किसी फिल्म की कहानी के रूप में लिखा गया था। इस उपन्यास में आर्थिक जगत और धन लिप्सा में लिप्त मानव जाति का सटीक वर्णन है। सन् 1957 में इनका एक हास्य-व्यंग्य प्रधान उपन्यास 'अपने खिलौने' प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास के कथानक में उच्चवर्गीय समाज का वैचित्र्यता शैली में प्रस्तुतिकरण है। सन् 1959 में इनका एक भारी-भरकम उपन्यास- 'भूले-बिसरे चित्र' प्रकाशित होता है। यह उपन्यास सन् 1885 से सन् 1930 तक के कालखण्ड की सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, एवं सांस्कृतिक परिवर्तन को व्यक्त करता है। निष्कर्षत: इस उपन्यास में 'मनुष्य, परिस्थितियाँ एवं नियन्ता' के संघर्ष की कथा है। 'शरणार्थी' समस्या पर प्रकाश प्रेषित करता उनका उपन्यास 'वह फिर नहीं आई' में वर्मा जी ने नैतिकता के नवीन मापदण्ड स्थापित करने का प्रयास किया है।

सन् 1962 में उनके नवीन उपन्यास 'सामर्थ्य और सीमा' का प्रकाशन हुआ। इस उपन्यास में प्रकृति पर पूर्ण अधिकार स्थापित करने के जो नि:सार प्रतिफल प्राप्त हो रहे हैं उनका प्रतीकात्मक ढंग से चित्रण प्रस्तुत किया गया है।[8] पूर्णत: नियतिवाद से प्रभावित व प्रेरित इस उपन्यास में मानव की क्षमता, सीमा एवं सामर्थ्य को जाँचने, मापने एवं परखने का प्रयास किया है। सन् 1963 में श्री वर्मा जी का नवीन उपन्यास 'थके पाँव' प्रकाशित होता है। इस उपन्यास में भी मध्यमर्गीय समाज समाज की नैतिक एवं आर्थिक समस्या पर विचार विमर्श किया है। इसी क्रम में सन् 1964 में इनका एक रोमाण्टिक व सेक्स से भरपुर उपन्यास 'रेखा' आया। इसकी खूब आलोचना हुई।[9] इस उपन्यास में एक महिला की कामवासना या विकृति के कारण स्वच्छंद कामाचार की कथा है।

वर्मा जी ने 'सीधी सच्ची बातें' नामक उपन्यास की रचना सन् 1968 मे की। यह कृति सन् 1939 से सन् 1948 तक की राजनीतिक गतिविधियों का विस्तृत विवरण प्रस्तुत करती हैं। सन् 1970 मे इनका एक अन्य उपन्यास 'सबहिं नचावत राम गोसाई' प्रकाशित हुआ। व्यंग्यात्मक शैली में लिखित इस उपन्यास का कथानक पूंजीपतियों, उच्च अधिकारियों एवं मन्त्रियों की कार्यप्रणाली व चिन्तन प्रक्रिया को उल्लेखित करता है।

सन् 1973 में इनका 'प्रश्न और मरीचिका' नामक उपन्यास प्रकाशित होता है। आत्मकथात्मक शैली में रचित इस कृति में प्रकृति, नियति, धन, आदर्श एवं गीता का दार्शनिक रूप दिखाई पड़ता है।

उपर्युक्त विवरण पश्चात् मूल विषय पर लौटते हैं-

विषय की प्रासंगिकता- चूंकि नारी शोषित, सम्मानित, पीड़ित व निर्बल-सबल दिखाई देती हैं। पुरुष अपनी आवश्यकता व समय की माँग के अनुरूप नारी को वही स्वरूप व पद दे दिया है। श्री वर्मा एक ऐसे उपन्यासकार है जो स्वतंत्र कलम के धनी एवं मानव विज्ञान के विद्यार्थी दिखाई देते हैं। अत: उन्होंने नारी को प्रत्येक कोण से देखा, परखा है और अपनी कृतियों में स्थान दिया है। इनके उपन्यास में मुख्य स्त्री पात्र एवं गौण स्त्री पात्र है। निस्सन्देह मुख्य स्त्री पात्रों के माध्यम से लेखक अपने उद्देश्य की प्राप्ति तक पहुँचता है।[10] वहीं गौण स्त्री पात्र उपन्यास के कथानक को विकास व गति प्रदान करने में सहायक होते हैं।[11]

श्री वर्मा के उपन्यासों की सर्वाधिक विशेषता यही है कि उन्होंने स्त्री को पूर्णत: स्वतंत्र रूप में महसूस किया है। इसी का परिणाम यह हुआ कि आधी आबादी कही जाने वाली स्त्री को जब पुरूष का मकड़जाल बाँध लेता है तो उसकी क्या भयावह स्थिति हो जाती हैं। स्त्री कैसे विभिन्न रूपों में बँट जाती है आदि-आदि। श्री वर्मा के स्त्री पात्रों को यदि कथानक से थोड़ा भी अलग कर दिया जाये अथवा मुख्य पात्रों को गौण पात्रों की दृष्टि से देखा जाये तो सम्पूर्ण कृति नीरस व अर्थहीन लगेगी।

वहीं इनके उपन्यासों में गौण स्त्री पात्र मात्र कहने को गौण हो सकते हैं किन्तु वे मुख्य पात्रों की आत्मा की भाँति दिखाई देते हैं।

जब हम श्री वर्मा के उपन्यासों में वर्णित स्त्री पात्रों के चरित्र का मूल्यांकन करते हैं तो हमें स्त्री पात्रों के विविध रूप दृष्टिगोचर होते हैं, जैसे पुत्री, पत्नी, बहन, माँ, सखी के रूप में। इसमें पत्नी के भी दो रूपों की व्याख्या प्राप्त होती हैं। शारीरिक अतृप्त पत्नी व पतिव्रता पत्नी। इसी भाँति विधवा स्त्री के जीवन का भी श्री वर्मा ने संदेनात्मक विधि से उल्लेख किया है। स्त्री के कुछेक अन्य स्वरूपों में प्रेमिका, वेश्या, रखैल व अभिनेत्री आदि की भी व्याख्या की गई है। यहाँ यह कहना अनिवार्य लगता है कि प्रेमिका के सन्दर्भ में लेखक ने 'विवाहित एवं अविवाहित' दोनों प्रकार की स्त्री पात्रों का वर्णन किया है। यदि हम इनके उपन्यासों में नारी समस्या की स्थिति का आकलन करें तो वर्मा जी के उपन्यासों में युगीन समस्यायें स्पष्ट रूप से चित्रित की गई हैं। समस्या पारिवारिक, सामाजिक,राजनीतिक, नैतिक,पारलौकिक किसी भी प्रकार की हो सकती हैं।[12]

विशेषत: भारत में नारी को पर्दाप्रथा, शिक्षा से वंचित, दाम्पत्य अधिकारों का पूर्णत: न देना, आर्थिक, सामाजिक, राजनैतिक, स्तर पर अधिकारों से वंचित करना जैसी अनेकों समस्याएँ हैं जिन पर श्री वर्मा ने तीक्ष्ण प्रश्न दागे हैं एवं पुरूष की कुंठित मानसिकता को पटल पर रखने का उद्योग किया है। नारी के साथ दहेज, अनमेल विवाह, बहु विवाह, तलाक, अवैध सम्बन्ध, विधवा समस्या एवं वेश्या बनाने जैसी भी कलंकित समस्यायें है जिन पर श्री वर्मा ने अपनी कलम चलाई है।

श्री वर्मा के उपन्यासों में हमें एक तरफ परम्पराओं का निर्वाह करने वाले स्त्री पात्र दिखाई देते हैं तो वहीं दूसरी तरफ आधुनिक शिक्षित स्त्री के विद्रोही तेवर भी दिखाई देते हैं।

मैं समझता हूँ किसी भी कृति के स्त्री पात्रों की वैचारिक स्थिति सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

श्री वर्मा के उपन्यासों में हमें हर तरफ परम्पराओं का निर्वाह करने वाले स्त्री पात्र दिखाई देते हैं तो वही दूसरी तरफ आधुनिक शिक्षित स्त्री के विद्रोही तेवर दिखाई देते हैं।

मैँ समझता हूँ किसी भी कृति के स्त्री पात्रों की वैचरिक स्थिति सर्वाधिक महत्वपूर्ण है।

श्री वर्मा एक कुशल लेखक तो थे ही अपितु वो एक सफल मनोवैज्ञानिक भी थे क्योंकि उनके उपन्यासों में स्त्री जाति के सम्पूर्ण व्यक्तित्व का जो चित्र प्राप्त होता है वैसा समकालीन अन्य उपन्यासकारों की कृतियों में दिखाई नहीं देता।

श्री वर्मा ने स्त्री की मार्मिक स्थिति का जहाँ एक ओर चित्रण किया है वही स्त्री को आधुनिकता, स्वतंत्र एवं सम्मान सहित जीवन व्यतीत करने की वकालत और हिमाकत भी की है।

श्री वर्मा ने स्त्री समाज हेतु नवीन दिशा निर्देशन देकर उन्हें आत्म सम्मान, स्वाभिमान का बोध करने की चेष्टा भी की है।

संदर्भ ग्रन्थ

1. डॉ. ब्रजनारायण सिंह- उपन्यासकार भगवतीचरण वर्मा, पृष्ठ 19.
2. भगवती चरण वर्मा- चित्रलेखा-भूमिका।
3. डॉ. भारत भूषण अग्रवाल- हिन्दी उपन्यास पर पाश्चात्य प्रभाव, पृ..- 460
4. डॉ. प्रभाकर माचवे- सन्तुलन, पृष्ठ- 170
5. डॉ. शंकर देव अवतरे- हिन्दी साहित्य में काव्य रूपों का प्रयोग, पृ.- 165
6. आचार्य रामचन्द्र शुक्ल- हिन्दी साहित्य का इतिहास पृष्ठ 536-37,
7. डॉ. गणेशन- हिन्दी उपन्यास साहित्य का अध्ययन, पृ. 344
8. डॉ. त्रिभुवन सिंह- हिन्दी उपन्यास और यथार्थवाद, पृ.- 486-87
9. ब्रजभूषण सिंघल- हिन्दी के राजनीतिक उपन्यासों का अनुशीलन, पृ. 475
10. सुरेश सिन्हा- हिन्दी उपन्यासों में नायिका की परिकल्पना, पृ. 9
11. रणबीर रांग्रा- हिन्दी उपन्यास मे चरित्र-चित्रण का विकास, पृ. 58-59
12. महेन्द्र भटनागर- समस्यामूलक उपन्यासकार- प्रेमचन्द्र, पृ.- 190